Research Paper ARTS

Sant Ravidas Ki Bhakti Sadhna

संत रविदास की भक्ति–साधना

Dr. Shiv Dutt Sharma | Associate Professor Govt. College Dhaliara, Distt. Kangra H.P

Aarti | Corresponding Author,

KEYWORDS

मनुष्य जीवन का चरम लक्ष्य भगवत्सान्निध्य की प्राप्ति है। इस सान्निध्य को प्राप्त करने के दो मार्ग हैं– निवृत्ति और प्रवृत्ति। निवृत्ति का अर्थ है– प्रतिकूल प्रवृत्तियों की निवृत्ति करके विवेक द्वारा अनात्म का त्याग करके भगवान का सान्निध्य प्राप्त करना और उसका साक्षात्कार करना। प्रवृति मार्ग का अर्थ है– शरीर की स्वाभाविक तीव्र प्रवृत्तियों द्वारा भगवान को प्राप्त करना, अर्थात सभी सांसारिक विषयों का भगवदार्पण कर देना।

भगवद् प्राप्त के चार मार्ग हैं – ज्ञान मार्ग, कर्म–मार्ग, योग–मार्ग, और भक्ति मार्ग। इन चारों मार्गों में से भक्ति को ही सुलभ बताया गया है।

''अन्यस्मात् सौलभ्यं भक्तों''– भक्ति सूत्र – 58

भारतीय दर्शन की परम्परा बड़ी गहरी है। जिसमें वैज्ञानिकता और विश्वास दोनों एकत्र दिखाई देते हैं। सूरदास ने अपने दर्शन में कहीं सत्य ही कहा है कि भक्ति अपार श्रद्धा एवं अंधविश्वास मांगती है। परन्तु भारतीय दर्शन में वैज्ञानिकता की कसौटी पर भक्ति को कसा गया है। सगुण और निर्गुण दो परम्पराओं में सगुण का सीधा संबंध भक्ति से है। भारतीय दर्शन की दीर्घ परम्परा में भक्ति का अपना अलग स्थान है। जिसे विभिन्न सम्प्रदायों ने अपने–अपने ढ़ंग से अभिव्यक्त किया है।

'दशधा' और 'नवधा' भक्ति की पहचान भारतीय दर्शन में पृथक ही प्रतीत होती है। रामानन्द और रामानुजाचार्य भक्ति–दर्शन के प्रतीक माने जाते हैं। 'नारदीय भक्ति सूत्र' के सूक्त में भक्ति पद्धति को सविस्तार व्याख्यायित किया गया है। भारतीय धर्म–साधना के इतिहास में भक्ति–मार्ग का विशिष्ट स्थान है। यद्यपि सहिंता भाग के रचना–काल तक उसके अस्तित्त्व का कोई परिचय नहीं मिलता। वैदिक युग में यज्ञ अथवा कर्मकाण्ड के माध्यम से धर्मानुष्ठान हुआ करते थे, तत्कालीन समय में वही भक्ति थी। मोनियर विलियम्स के अनुसार 'भक्ति' शब्द की व्युत्पत्ति 'भज' से की जा सकती है। श्रद्धा उपासना से विकसित होकर उपास्य देव के ऐश्वर्य में भाग लेना–(भज– भाग लेना) ही भक्ति है।

'भक्ति' से अभिप्रायः है सेवा का प्रकार। 'शाडिल्य भक्ति सूत्र' में भगवान के प्रति परम अनुरक्ति को भक्ति बताया गया है।

'' सा परानुरक्तिरीश्वरे'' – शांडिल्य सूत्र।

वैसे भक्ति का सर्वप्रर्थम उल्लेख 'श्वेताम्बर उपनिषद' में मिलता है। 'भगवत पुराण' में भक्ति का महत्त्व अनेक स्थलों पर दिया गया है। कलियुग में भक्ति को ही प्रभुसाधना का आधार बताया गया है।

'अनन्य भाव से भगवान पर आश्रित रहना ही भक्ति है' ''भगवान की कृपा के बिना अन्य कोई सहारा न हो – यह अनन्य भक्ति है।'' कल्याण प्राप्ति के जितने भी साधन है उनमें भक्ति श्रेष्ठ है।

''भगवान के भजन का नाम ही भक्ति है।'' यहॉ भजन से अभिप्राय – सेवा करना है।

वास्तव में हमारा आकर्षण भगवान के प्रति ही है परन्तु नाशवान पदार्थो को महत्त्व देने से वह आकर्षण संसार में हो जाता है। जैसे गंगाजल इतना पवित्र है कि उसका स्पर्श करने से सैंकड़ों जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं। परन्तु बर्षा ऋतु में जल बढ़ने के बाद जब गंगा जी का जल घटता है, तब उसका कुछ जल गड्ढों में रह जाता है। गड्ढों का वह जल (गंड़ोज्ञ) कहलाता है, जो मदिरा के समान है। कारण कि वह गंगा जी से विमुख है या गंगा ने उसका त्याग कर दिया है। हम अपना कलश गंगा जी से भरते हैं तो वह अशुद्ध नहीं है क्योंकि गंगा ने उसका त्याग नहीं किया है। ऐसे ही भगवान परम पवित्र है– ''पवित्र परमं भवान।''

देवर्षि नारद ने भी नारदीय भक्ति सूत्र में भक्ति के विषय में कहा कि ''सा त्वस्मिन् परप्रेमअपा'' अर्थात एक परमेश्वर में अतिशय प्रेम रूपता ही भक्ति है।'' 'अमृतस्वरूपा च'' और वह अमृत रूप है'' भक्ति से भगवान के दर्शन भी हो सकते हैं– यह भक्ति की विशेषता है। रामायण में भी भक्ति की विशेष महिमा बतायी गयी है। उसमें ज्ञान को तो 'दीप' की तरह बताया गया है, पर भक्ति को 'मणि' की तरह कहा गया है।

दीपक को जलाने के लिए तो घी, बत्ती, आदि की जरूरत होती है और हवा लगने से वह बुझ भी जाती है, पर मणि के लिए न घी, बत्ती आदि की जरूरत है और न ही वह हवा से वुझती है। जो भक्ति ज्ञान के द्वारा बड़ी कठिनाई से प्राप्त होती है वही भगवान का भजन करने से बिना इच्छा अपने आप ही प्राप्त हो जाती है। 'मानस' के 'उतरकाण्ड मे स्पष्ट है –

''अति दुर्लभ केवल्य परमपद। संत पुरान निगम आगम बढ़।।
राम भजन सोई मुकुति गोसाईं। अनइच्छित आवर बरिआई।।

'भक्ति' वह भावधारा है जो मनुष्य को भगवान के प्रति पूर्णतः समर्पित होने के लिए प्रेरित करती है। भक्ति के दो भेद हैं– वैधी भक्ति और प्रेमा भक्ति। वैधी भक्ति विधि–विधानों से इतनी भरी रहती है कि इसमें अनेक प्रकार की जटिलताएं आ जाती है इसलिए संतों ने वैधी भक्ति का खण्डन करके प्रेमा भक्ति को उपयोगी माना है। क्योंकि प्रेमा भक्ति में वैधी भक्ति की भॉति विधि– विधानों की जटिलता नहीं होती वरन सहज भावनाओं की सरलता और सरसता होती है।

भारतीय दर्शन कर्मवाद की प्रतिष्ठा करता है। यही प्रतिष्ठा भारतीय जन–जीवन की प्रेरणा का मूल स्त्रोत है। भगवत्कृपा के लिए जहॉ पूर्वजन्म के कर्मों का योग रहता है, वहीं वर्तमान काल के कर्म भी महत्वपूर्ण होते हैं। जब तक भगवत्कृपा नहीं होती, तब तक व्यक्ति का मार्ग निर्देशन करने में सच्चा गुरू नहीं मिल पाता।

संत शब्द का सीधा सा अर्थ है–सदा वने रहने वाला। यह शब्द एक बचन के रूप में प्रयुक्त होता है। इस प्रकार संत शुद्ध अस्तित्त्व का द्योतक है। जो नित्य, सनातन परमब्रह्मा या परमतत्त्व के लिए सम्भव माना जा सकता है। जिसका कभी, किसी युग में भी विनाश न हो, जो हर युग के परिवर्तन के साथ भी बना रहे, वही जो एक रस हो तथा जिसे सत्य के समरूप माना जाए वही संत है।

परोपकारी, सज्जनता एवं सदाचारी तथा सत्बुद्धि व्यक्तित्त्व के लिए संत शब्द का प्रयोग किया जाता है। यह संत शब्द परमब्रह्म या उस अज्ञात सत्ता का द्योतक है।

संत साहित्य हिंदी साहित्य के इतिहास में साहित्य का किरीट स्वरूप है। संतो की सुधा वाणीमात्र ही संसारिक त्रितायों दैहिक, दैविक एवं भौतिक तापों से मुक्ति दिला सकती है।

संतों का अविर्भाव भारतीय हिंदी साहित्य में ऐसे समय पर हुआ, जब भारतीय जनमानस निराशा एवं दिशाहीनता के दलदल में फंसा था। तत्कालीन समय के विद्रूप स्वरूप से त्रस्त मानव जीवन के लिए सन्तो की वाणी प्रेरणास्त्रोत एवं अमृत तुल्य रही है। संत साहित्य का यद्यपि हिन्दी साहित्य के इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह साहित्य महान होते हुए भी अपने आप में आज तक भी अपूर्ण समझा जाता है। क्योंकि संतो के साहित्य की उपलब्ध अपूर्ण सामग्री के कारण श्रद्धा के पात्र कई संत आज भी उपेक्षणीय है। मेरी दृष्टि में इसका सर्वप्रथम कारण यही है कि इनकी मौलिक वाणी का प्रर्याप्त रूप में सहजता से उपलब्ध न हो पाना। इन मध्यकालीन उपेक्षणीय संतो में संत रविदास भी प्रमुख है।

संत रविदास उन भक्तों एवं संतों की श्रेणी में गिने जाते हैं, जिन्होने यद्यपि भक्ति के क्षेत्र में कोई पृथक विचारधारा नहीं दी परन्तु अपने मौलिक गुणों के कारण उन्हे अन्य संतों एवं भक्तों से पृथक देखा जा सकता है। भारतीय दर्शन एवं वेदों में ही सर्वप्रथम भक्ति के दर्शन होते हैं, वहीं भक्तिधारा मध्ययुगीन भक्त एवं संत कवियों के काव्य में प्रकट होती है। मध्यकालीन संतों में जहॉ कबीर, दादू, ज्ञानेश्वर का नाम बड़ी श्रद्धा से लिया जाता है वहीं संत शिरोमणि गुरू रविदास जी को भी अंत्यंत श्रद्धा एवं सम्मान के साथ संत सहित्य में प्रतिष्ठा मिली है। वस्तुतः कबीर जैसे उद्‌भट्ट, फक्कड़ संतों की वाणी के प्रति विद्वानों का ध्यान इसलिए अधिक गया क्योंकि उनकी वाणी शीघ्र उपलब्ध हो गई तथा कबीर का स्तर संत रविदास की तुलना में अधिक कठोर एवं कर्कश था जबकि संत रविदास की वाणी न तो उपलब्ध थी और न हीं वह कबीर की तरह अपनी बात को कठोरता से कहने के पक्षधर थे। खण्डन–मण्डन

उन्हे पसंद नहीं था। यही कारण है कि उन्हे भक्त एवं संत शिरोमणि की उपाधि से सम्मानित किया गया।

संत रविदास का प्रादुर्भाव मध्यकालीन समाज के लिए एक वरदान कहा जा सकता है क्योंकि वह समाज हर दृष्टि से पतनोन्मुखी था। स्वयं निम्न जाति में उत्पन्न होकर वे उच्च जाति के लिए प्रकाश का स्तम्भ बने। उन्होने निम्नवर्ग को केवल उभारा ही नहीं बल्कि उस पथ पर भी अग्रसर किया और मुसलमान धर्म निम्न जातियों को आरक्षण दे रहा था तो उधर हिन्दु समाज को एक जुट करना सरल कार्य नहीं था, जिसे संत रविदास जी ने पूरा किया।

संत गुरू रविदास की भक्ति–भावना वेदों, शास्त्रों, उपनिषद एवं गीता जैसे हमारे पुरा. तन धार्मिक ग्रंथों से प्रेरित हैं। सभी पहुँचे हुए संत महात्माओं की भांति संत रविदास का भी यहीं संदेश है कि परमात्मा–आत्मा एक है। वह संसार में कोई नया धर्म या सम्प्रदाय बनाने के लिए नहीं आते बल्कि आवागमन के चक्र में पडे और मालिक से बिछुड़े जीवों को जन्म–मरण के बंधन से मुक्त करवाने और उन्हे परमात्मा से मिलाने के लिए आते हैं। संत रविदास की भक्ति नवधा भक्ति से प्रभावित है। उनके काव्य में श्रवण भक्ति, कीर्तन, सुमिरन, नाम भक्ति, पादसेवन, अर्चना, वन्दन, सखा सभी रूपों के उदाहरण मिल जाते हैं।

गुरू रविदास जी ने साधना मार्ग को सर्वोत्तम माना है। उनके अनुसार भक्ति सच की पहचान है। इसके विना नाचना गाना, तप, जप, दान, भ्रमवश कर्म करना इन्द्रिय–निग्रह, तप की शुद्वि के लिए मुद्राएं धारण आदि सब भ्रम एवं व्यर्थ है। संत–रविदास के अनुसार योग साधना, आहार घटाना, निद्रा साधन, वैराग्य धारण करना, मुंड मुंडाना, माला फेरना, रिद्वि–सिद्वि प्राप्त करना भक्ति नहीं बल्कि अपने में से 'मैं' तत्त्व को गवांकर निष्काम भाव से प्रभु के चरणों में आत्मसमर्पण करना ही परम भक्ति है। गुरू जी के अनुसार प्रभु से कीटभृंगी संबंध स्थापित करना तथा अपने आप में समाना ही भक्ति है।

गुरू जी की वाणी में उनकी भक्ति साधना मार्ग संबधी झुकाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। संत रविदास ने हमें यह याद दिलाया है कि हमारा यह मानव–जीवन अनेक जन्मों के पुन्य से प्राप्त हुआ है तथा यह अवसर अत्यन्त अनमोल एवं दुर्लभ है। परमात्मा से मिलाप होना ही इस मानव–जीवन का प्रमुख उद्देश्य है। अनन्त काल से चले आ रहे जन्म–मरण के चक्र से छुटकारा माना ही एकमात्र अवसर है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गुरू रविदास की भक्ति में परम्परागत सब तत्त्व मिलते हैं जिसने मध्यकालीन साहित्य के साथ रिश्ता जोड़ दिया है। उन्होने भक्ति साहित्य को देखा, परखा अनुकरण किया और फिर अपनी विचारधारा का मौलिकता पूर्ण निरूपण किया। उनकी भक्ति अनुभव स्तर पर परखी हूई भक्ति है।

गुरू जी की भक्ति वैदिक भक्ति का रिश्ता मध्यकालीन भक्ति से जोड़ती है, तोड़ती नहीं। गुरू जी ने संतों, भक्तों, मुनियों को श्रद्धा की माला में पिरोया है इसलिए उनकी भक्ति आज के समय में भी उतनी ही सार्थक है। जरूरत केवल इनकी वाणी को अमलीजामा पहनाने की है। अन्ततः स्पष्ट है कि संत रविदास संत से भी बढ़कर भक्त कवि हैं।

REFERENCES

1. शर्मा डा0 वेणी प्रसाद संतगुरू रविदास वाणी चण्डीगढ़ विश्वभारती प्रकाशन सं0 2037 प्र0 सं0 2. शर्मा डॉ0 वेणी प्रसाद आदि गुरू ग्रंथ साहिव चण्डीगढ़ विश्वभारती प्रकाशन सं0 2037 प्र0 सं0 सहायक पुस्तके–संन्दर्भ सूचि 3. उपाध्याय डॉ0 बलदेव भारतीय दर्शन वाराणसी चौखम्भा, अमर भारती प्र0 सन 1978 प्र0 स0 4. उपाध्याय डॉ0 बलदेव भारतीय दर्शन वाराणसी शारदा संस्थान सन 1960 प्र0 ... 5. उपाध्याय डॉ0 बलदेव भारतीय दर्शन वाराणसी, शारदा, संस्थान सन 1965 प्र0 स0 6. उपाध्याय काशीनाथ गुरू रविदास एस. एल. के. सींधी अमृतसर सन 1983 7. शर्मा पं0 श्री राम भारतीय संस्कृति एक युग निर्माण योजना मथुरा सन 2002 8. स्वामी विवेकानन्द भक्ति योग स्वामी ब्रहमस्थान्द नागपुर सन 2005 9. कालेश्वर, काके साहिव एवं सहयोगी हिन्दी के जनपद संत वाराणसी, मोतीलाल वनारसी दास सन 1963 10. आजाद पृथ्वी सिंह 'सम्पादन' युग प्रवर्तक संत रविदास जालन्धर दीपक पविलशर्ज सन 1983 प्र. स. 11. गुप्ता, डॉ0 आशा सगुण एवं निर्गुण हिन्दी साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन प्रयाग हि0 सा0 ... सन् 1970 प्र0 स0 12. चर्तुर्वेदी, परशुराम उत्तरी भारत की संत परम्परा प्रयाग, भारती भण्डारू सन 2008 प्र0 स0 13. चर्तुर्वेदी, परशुराम सतं काव्य इलाहायाद, किताब महल सन 2007 प्र. स. 14. तिवारी, रामानंद भारतीय दर्शन का परिचय प्रयाग भारती मंदिर सन 2009 प्र0 स0 15. त्रिवेदी हजारी प्रसाद हिन्दी साहित्य की भूमिका नई दिल्ली, राज कमल प्र0 स0 1969 16. पदम गुरू चरणसिंह संत रविदास विचारक और कवि जालन्धर नवचिन्तन प्रकाशन सन 1977 17. मंजीठिया सुदर्शन सिंह संत साहित्य दिल्ली, रूपकमल प्रकाशन सन 1962 18. सैणी डॉ0 धर्मपाल रैदास नई दिल्ली साहित्य अकादमी सन 1979 प्र0 स0 19. शर्मा डॉ वेणी प्रसाद संत रविदास की भक्ति साधना चण्डीगढ विश्वभारती प्रकाशन स0 2037 प्र0 स0 20. सहगल, डा0 मनमोहन संत काव्य का दार्शनिक विश्लेषण चण्डीगढ भारतेन्दु भवन सन 1965 प्र0 स0 21. सिंघल डॉ0 ध र्मपाल गुरू रविदास जीवन ते विचारधारा दिल्ली, पंजायी अकादमी सन 1989 प्र0 स0 कोश ग्रंथ सुची 22. पाठक आर0 डी0 स्टैण्डर्डडल्यूस्ट्रोन्डि आफ हिन्दी ले0 पुएज मार्गव वुकडिपो, वाराणसी सन 1968 23. स0 कलिका प्रसाद वृहद् हिन्दी कोश ज्ञान मण्डल, लिमिटेड वाराणसी 1978